श्री
सम्मेदशिखर मण्डल विधान

रचयित्री

प. पू. आर्यिका 105 विज्ञानमती माता जी

सम्पादिका

प. पू. आर्यिका 105 आदित्यमती माता जी

प्रकाशक

धर्मोदय साहित्य प्रकाशन

सागर (म. प्र.)

- **कृति**

  सम्मेदशिखर मण्डल विधान

- **रचयित्री**

  प. पू. आर्यिका 105 विज्ञानमती माता जी

- **सम्पादिका**

  प. पू. आर्यिका 105 आदित्यमती माता जी

- **लागत मूल्य**

  8/-

- **प्राप्ति स्थान**

  धर्मोदय साहित्य प्रकाशन

  सागर (म. प्र.) 094249-51771

- **मुद्रक**

  विकास ऑफसेट, भोपाल

सम्पादकीय

महाकवि आचार्य ज्ञानसागर जी महराज के द्वितीय शिष्य परम तपस्वी ध्यानी स्व. आचार्य कल्प 108 विवेकसागर जी महाराज की अनुगामिनी शिष्या परम पूज्या आर्यिका श्री 105 विज्ञानमती माताजी द्वारा सृजित यह सम्मेदशिखर विधान सिद्धक्षेत्र की महिमा गरिमा की जीवंत कृति है, इसमें रचयित्री ने तीर्थराज से तन्मय होकर छन्दबद्ध रूप में क्षेत्र की कीर्ति गायी है। इसको पढ़कर ऐसा लगता है कि प्रस्तोत्री की तीर्थराज सम्मेदाचल के प्रति अगाध श्रद्धा है और ''उसी श्रद्धा में सराबोर होकर विधान की पीठिका में लिखा है कि गिरिराज पर उगने वाली वनस्पति भी कुछ भव में मोक्ष जायेगी'' जिससे ऐसा लगता है कि बचपन में सुनी बात सत्य है कि वहाँ का कण-कण पवित्र है, पूज्य है, श्रद्धेय है, तीर्थराज की वंदना करने वाला निश्चित कुछ ही भव में मोक्ष जायेगा। विधान की पीठिका में पूज्य आर्यिका श्री ने ''सम्मेदशिखर व्रत'' की उत्तम, मध्यम, जघन्य विधि का प्रारम्भ एवं निष्ठापन/उद्यापन के साथ-साथ उससे स्वर्ग-अपवर्ग के अभ्युदय को प्रस्तुत किया है।

प्रस्तुत विधान में एक ही पूजन है और तीर्थराज पर विराजित 25कूटों से सम्बन्धित 75 अर्घ चढ़ाये गये हैं। प्रथम अर्घ कूट के स्वामी अर्थात् तीर्थंकर परमात्मा जो वहाँ से मोक्ष पधारे हैं, उनको दूसरे अर्घ कूट को और तीसरे अर्घ कूट से मुक्ति प्राप्त करने वाले असंख्यात मुनिराजों को चढ़ाया गया है। इन अर्घ्यों में कहीं-कहीं इतनी सजीव झाँकी प्रस्तुत की है कि पढ़ने पर ऐसा लगता है, मानों साक्षात् तीर्थराज पर ही बैठे हैं, जैसे गौतमस्वामी को अर्घ चढ़ाते हुए लिखा है-

''जब कोश त्रय का मार्ग तयकर, नाथ गौतम पावते...''

तह पवन शीतल परस मानो, धर्म का ही परस हो...॥

जब हम तीन कोश अर्थात् 8 कि.मी. की चढ़ाई चढ़कर गौतम स्वामी की टोंक पाते हैं तब वहाँ पर चलने वाली हवा का स्पर्श करते ही ऐसा लगता है कि हमने धर्म का ही स्पर्श कर लिया, हमारी सारी शारीरिक-मानसिक थकान दूर हो जाती है, और हमें आत्मिक शांति मिल जाती है, ऐसे ही अनेकानेक चित्रण किये गये हैं।

इसी प्रकार यात्री के दिल में उठने वाली अनेक कल्पनाओं का भी साक्षात्कार इन अर्घ्यों में हुआ है, ये सभी अर्घ्य सीधी सरल लोकप्रिय छन्दों में (ज्ञानोदय, नरेन्द्र, गीता,दोहा आदि) है पर्वत पर पहुँचने के पूर्व चौपड़ा कुण्ड पर स्थित त्रिमूर्ति मंदिर में अर्घ्य चढ़ाया है, और नीचे मधुवन में कल्याण निकेतन तक विराजित सम्पूर्ण जिनालयों को भी अर्घ्य चढ़ाया है, जयमाला भी चिरपरिचित छन्द पद्धरी में है, उसमें दो विशेष घटनाओं एवं यात्रा के यादगार में बनाये गये चित्तौड़गढ़ के कीर्तिस्तम्भ का रोचक वर्णन किया है, इन सबके माध्यम से श्रद्धा दृढ़ता एवं संकल्प शक्ति के फल को ही बताया है, विधान की भाषा सरल और सुबोध है, श्रद्धालू चाहे तो प्रतिदिन भी पूजा के साथ कर सकता है। मैं आर्यिका श्री से प्रार्थना करती हूँ कि आपकी लेखनी से हमेशा ही ऐसे विधानों का सृजन होता रहे ताकि हम जैसे तुच्छ बुद्धिवाले भी विशुद्धि बढ़ाकर कर्मों की निर्जरा करने में समर्थ हो सके, साथ ही भगवान से प्रार्थना है कि त्याग-तपस्या से दीप्तमान पूज्य आर्यिका श्री का जीवन चिरस्थायी बना रहे। और उनकी कीर्ति दिग-दिगंतरों में फैलती हुई, हम सभी भव्यों को आत्मा का अजर-अमर संदेश देते रहे और उनका संदेश हर घर हर आँगन हर दिल में प्रवेश करें। इसी भावना से उनके पावन पुनीत चरणों में नमन् नमन् नमन्.....।

इस पुस्तक की सुंदर साजसज्जा तथा शुद्ध मुद्रणकार्य की संकल्पना के लिये प्राचार्य सुभाष शास्त्री को आशीर्वाद।

आर्यिका श्री का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

राजस्थान प्रान्त के उदयपुर जिले में भीण्डर नगर है, उस नगर के श्रावक श्रेष्ठी श्री बालूलाल जी के यहाँ आपका जन्म हुआ। आप उनकी द्वितीय बालिका होते हुए भी अद्वितीय थीं। आप बचपन से ही पढ़ने-लिखने में तेज एवं आपकी कुशाग्रबुद्धि, तीव्र तर्कशक्ति सभी को अपनी ओर सम्मोहित करती थी। आपकी वीतराग प्रभु एवं उनके बताये हुए मार्ग के प्रति विशेष रुचि एवं श्रद्धाभक्ति थी और कहते भी हैं कि जो प्रभु के चरण-कमलों का सहारा ले लेता है, उसके संसार बंधनों के कर्म रूपी कवच शीघ्र ही खुल जाते हैं वैसे ही आपकी प्रभु की भक्ति और श्रद्धा का फल यह हुआ कि आपको अपने ही नगर में आचार्य कल्प गुरुवर विवेकसागर जी महाराज का सान्निध्य प्राप्त हुआ अर्थात् महाराज का वर्षायोग भीण्डर में हुआ।

उनके संघ की ब्र. बहिन कुसुम दीदी जी से आप बहुत प्रभावित हुई और उन्हीं के साथ अपने वैराग्य को दृढ़ कर परिवार वालों से अनुमति ले गुरुचरणों में आ गयीं और करीब 15 माह में अपने गुरु से दीक्षा ग्रहण कर ली और पूज्य गुरुदेव ने आपको लीला से पूज्य आर्यिका विज्ञानमती बना दिया। जैसा इनका नाम है वैसा ही इनका काम है।

आज आप इस पश्चिमी सभ्यता एवं विषयभोगों की चकाचौंध से ग्रसित दुखित सारे जगत् को शीतलता प्रदान कर रही हैं। इनका मन भी तीर्थंकरों की तरह संसारी प्राणी कैसे सुखी हों, कैसे सुखी हों, कैसे उनका कल्याण हो, इसकी खोज में लगा रहता है, सभी जीवों के कल्याण के साथ-साथ आप अपनी त्याग तपस्या एवं साधना करने में कभी पीछे नहीं

रहती, अतः आप 12 प्रकार के तपों की साधना करती हुई एवं उन तपों की उत्कृष्ट भावना करते हुए अपने चारित्र को निर्मल बनाती हुई मोक्षमार्ग में बढ़ती ही जा रहीं हैं और इन्हीं भावनाओं के साथ आपके सम्मेदशिखर की यात्रा करने के उत्कृष्ट भाव जागृत हुए और आपने इस यात्रा को पूर्ण करने के लिये इतनी विशुद्धि बढ़ायी और उसके साथ ही उपधान में नमक-दूध से बनी चीजें आदि के त्याग रूप अनेक नियम लिए और उसी का फल हुआ कि आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज से अतिशय क्षेत्र बहोरीबंद में शुभाशीर्वाद प्राप्तकर कुण्डलपुर से अपनी यात्रा प्रारम्भ की अर्थात् गुरु प्रदत्त आशीर्वाद एवं भगवान की भक्ति का फल यह हुआ कि माता जी करीब एक माह में सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर पहुँच गईं और 4 जुलाई 2001 को वर्षायोग की स्थापना के साथ-साथ शाश्वत सिद्धक्षेत्र की वंदना के लिये कदम बढ़ा दिये, जो वर्षों से भावना संजोयी थी, वह आज अपने गंतव्य पर पहुँच रही थी, अर्थात् जिस प्रकार रत्नों में श्रेष्ठ रत्न चिंतामणि, फलों में श्रेष्ठ फल आम और ग्रंथों में श्रेष्ठ तत्त्वार्थसूत्र है, वैसे ही तीर्थों में श्रेष्ठ तीर्थराज सम्मेदशिखर है, जहाँ से 20 तीर्थंकरों सहित अनंतानंत आत्माएँ सिद्ध पद को प्राप्त हुअी है, ऐसी पवित्र भूमि के आज माँ श्री के साथ-साथ हम सभी को भी दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ था, जैसे ही तीर्थराज की चढ़ाई हुई माँ श्री जब गौतम गणधर महाराज की कूट पर पहुँचीं तो उन्हें बहुत थकान महसूस हुई लगा कि अब वंदना कैसे होगी? लेकिन जैसे ही भगवान के चरणों के दर्शन हुये कि सारी थकान भूल गईं और वंदना कैसे हो गई मालूम ही नहीं चला। शायद यह तीर्थराज के प्रति जो श्रद्धा एवं भक्ति थी उसी का फल है, और फिर तो इतनी विशुद्धि बढ़ी, माँ श्री को जहाँ एक वंदना भी भारी लग रही थी, वहीं पर रहकर उन्होंने वर्षायोग के अंतिम दो माह में करीब अनेकानेक वंदना की ली, यह भगवान की भक्ति का फल नहीं तो क्या ? अर्थात् भगवान की

भक्ति एवं गुणों का अनुराग उनको रोक नहीं पाया और तीर्थराज के दर्शन कर उसकी महिमा अपने हृदय में धारणकर वहाँ से विहार किया लेकिन उस तीर्थराज की विशुद्धि का आनंद शायद माँ श्री अकेली अपने आप में रख नहीं पा रहीं थीं, उनकी वह सब जीवों के प्रति कल्याण की भावना अकेले आनंद का रसास्वादन नहीं करने दे रही थी। इसलिये वह माँ के हृदय से बहकर (निकलकर) ओष्ठ तक आ गई फिर उनके हाथों ने भी उनका साथ दिया और उसे लिपिबद्ध करने के लिये मजबूर कर दिया। इसमें माँ की मजबूरी कहें या हम भव्य जीवों का सौभाग्य कि जिनके निमित्त से ही माँ श्री अपनी भक्ति को हम लोगों के ऊपर करुणा कर हमें सम्मेदशिखर विधान के रूप में लिपिबद्ध कर दिया। यह उनकी हम जैसे भव्य जीवों पर अनुकम्पा ही तो है।

इस विधान में उन्होंने अपनी लेखनी से 24 तीर्थंकरों का वर्णन किया है तथा एक-एक कूट की महिमा बताई है कि एक-एक कूट के दर्शन करने से हजारों करोड़ों उपवासों का फल मिलता है और इस तीर्थराज की पूरी वंदना करने से नरक और तिर्यञ्च गति का बंध टूट जाता है, यह तो सम्मेदशिखर तीर्थ के प्रत्यक्ष दर्शन का फल है, लेकिन जो प्रत्यक्ष दर्शन नहीं कर पा रहा है वह और जो प्रत्यक्ष दर्शन कर भी रहा है, वह दर्शनों की भावना करेगा, तो उसके फल का तो कहना ही क्या उसका तो जीवन ही सफल हो जायेगा। विधान के माध्यम से उसे इतना पुण्य का अर्जन हो जायेगा कि उसे शीघ्र ही तीर्थराज के दर्शनों का लाभ होगा और उसके असंख्यात गुणी कर्मों की निर्जरा होगी।

संघस्था : आर्यिका पवित्रमती

अनुक्रमणिका

अ. क्र.	नाम	पृ. क्र.
1.	गौतम गणधर कूट	14
2.	ज्ञानधर कूट	15
3.	श्री मित्रधर कूट	16
4.	श्री नाटक कूट	17
5.	सम्बल कूट	18
6.	संकुल कूट	19
7.	सुप्रभ कूट	20
8.	मोहन कूट	21
9.	निर्जर कूट	22
10.	ललित कूट	23
11.	कैलासगिरि कूट	24
12.	विद्युत्वर कूट	25
13.	स्वयंप्रभ कूट	26
14.	धवल कूट	27
15.	चम्पापुर मन्दारगिरि कूट	28
16.	आनन्द कूट	29
17.	सुदत्तवर कूट	30
18.	अविचल कूट	31
19.	शान्तिप्रभ कूट	32
20.	पावापुर पद्मसरोवर	33
21.	प्रभास कूट	34
22.	सुवीर कूट	35
23.	सिद्धवर कूट	36
24.	गिरनारगिरि कूट	37
25.	सुवर्णभद्र कूट	38
26.	सम्मेदशिखर की तलहटी में स्थित जिनालयों को अर्घ	39
27.	सम्मेदशिखर वंदना	45

श्री सम्मेदशिखर मण्डल विधान पीठिका

(छन्द-ज्ञानोदय)

पञ्च परम गुरु ज्ञान सूरि अरु, विद्या गुरु को नमन करूँ।
शारद माता दीक्षा गुरु जो, विवेक सिन्धु के चरण पड़ूँ॥
कहूँ पीठिका सिद्ध क्षेत्र की, शाश्वत तीरथ जग विख्यात।
सुनो भव्य भवतारक है यह, करो वन्दना शिव का पाथ॥1॥

कहते हैं जिस वनस्पति ने, जन्म लिया इस गिरी राजा।
वो भी शिव का राज करेगी, बनकर जग में कृत काजा॥
इसी तरह जो पशु पक्षी अरु, गाय, भैंस हरि चीता हो।
स्पर्श करेगा तीर्थ क्षेत्र का, सदा रहे भवभीता वो॥2॥

पापी के सब पाप धुलेंगे, पुण्यवान के पुण्य बढ़ें।
तपसी जन के तप वृद्धी हो, निज ध्यानी सुन मोक्ष चढ़े॥
वन्दन का यह शुभ फल सुनकर, करो वन्दना अन्तस से।
भाव विशुद्धी परम बढ़ाकर, छूटो भव के बन्धन से॥ 3॥

तीर्थक्षेत्र के व्रत की विधि को, आगम के अनुकूल सुनो।
उद्यापन अरु फल को भी सुन, व्रत को धारो चित्त गुनो॥
चौबीस कूट के एक एक शुभ, अनशन से यह व्रत होता।
उत्तम मध्यम जघन रीति से, सुख देता है अघ खोता॥4॥

एक वास अरु एक पारणा, मूर्च्छा आरंभ घर तजकर।
जिनमंदिर में रहे करे जिन, पूजन अर्चन मद तजकर॥
सामायिक स्वाध्याय क्षमा अरु, मौन रहे वृष चर्चा में।
तीत करे दिन रात शान्ति से, मात्र जिनेश्वर अर्चा में॥ 5॥

इस विधि उत्तम विधि से ये व्रत, अड़तालिस बस दिवसों में।
होता पूरा भक्तिभाव से, श्रावक मुनि के यह सोहे॥
मध्यम विधि में चौबिस अनशन, जब शक्ती हो तब करना।
निवृत्त होकर पापारम्भ को, कषाय अवश ही तुम तजन॥6॥

जघन्य विधि में एकाशन या, ऊनोदर रस त्याग करो।
नौ दस घंटे पाँच सात या, घंटे मंदिर आप रहा॥
जो ना आवश्यक है घर के, उन सब को तो तजना रे।
मध्याह्न में भी तुम मन्दिर, जाकर प्रभु को भजना रे॥ 7॥

इस विध व्रत को पूरा करके , उद्यापन भी भक्ती से।
करना पूजा विधान मँडाकर, और दान दे शक्ती से॥
चौबिस जन या युगलों को, सम्मेदशिखर ले जाना जी।
तीर्थ कराकर धन को पर के, उपकारों में लाना जी॥ 8॥

घंटा झालर जिन प्रतिमा या, गंधोदक का पात्र सही।
छत्र चमर भामण्डल वेष्टन, चौबिस चौबिस शास्त्र सही।
उपकरणों को दान करो अरु, चार संघ को भोजन भी॥
देकर करना महा महोत्सव, आनन्दित हो दिन रजनी॥9॥

इतनी शक्ती ना होतो सुन, शक्ति देखकर करना जी।
बिल्कुल शक्ती ना हो तो तुम, दूने व्रत को धरना जी॥
अष्टाह्निक से पर्व दिनों से, कल्याणक की तिथि से ये।
शिखर कूट पर करना प्रारम्भ,चाहे कोई मिति से है॥ 10॥

जाप करो तुम उन उन प्रभु का, जिनका व्रत हो जिस दिन ही।
उसी कूट की इक्किस ग्यारह, माला फेरो उस दिन ही॥
मावस पडवा चौथ नवमी अरु, तिथियाँ जो है हीनाधिक।
और पक्ष जो कृष्ण रहा है, व्रत प्रारम्भ ना करना मित॥11॥

इस विधि व्रत का धारण-पालन, उद्यापन का जो है फल।
जिसकी जितनी श्रद्धा भक्ती, होगी उतना पावे नर॥
सद्य मिलेगी सौख्य शान्ति अरु, दूजे भव में सुर होगा।
कुछ ही भव में मुक्ति कान्त बन, शुद्धातम ही उर होगा॥12।

श्रेष्ठ मनुज बन चक्रवर्ती महराजा राजा बनता है।
स्वर्ग लोक में इन्द्र बने तब, वश में रहती जनता है॥

इसीलिये ये भव्य जनों तुम, यथाशक्ति यह व्रत धारो।
और करो तुम नित्य वन्दना, आतम में चर भव टारों॥ 13॥

इति मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

(अथ - स्थापना)

(छन्द-ज्ञानोदय)

अनादिकाल से सिद्ध क्षेत्र यह, शाश्वत सुन्दर धाम रहा।
अब तक चौबीसों ही जिन ने, भवसागर का पार गहा॥
जैसे खाई बड़ी बड़ी अर, पर्वत भी अति ऊँचे हैं।
तैसे ही प्रभु कर्म नाशकर, बने जगत में सच्चे है॥ 1॥

सीसम कैथा जामुन आदिक, गगन चूमते वृक्ष रहे।
निकट लगे यह नभ तो ऐसे, मानो हाथों ऋक्ष गहे॥
तीर्थंकर अरु ऋद्धीधर औ, नेक मुनीश्वर आये थे।
तप अग्नी में विधि ईंधन को, जला मोक्ष को पाये थे॥2॥

(दोहा)

आह्वानन अरु थापना, निकट करन ये काज।
मैं करता बस पावने, मोक्ष-पुरी का राज॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(अष्टक)

(चाल- जहाँ डाल डाल पर..... ।)

क्षीर उदधि के प्रासुक जल की, झारी भरकर लाया।
धारा देकर जन्म नाश हो, विनती करने आया॥
मैं पूजन करने आया।
सम्मेदशिखर शुभ सिद्ध क्षेत्र की, पूजन करने आया।
मैं पूजन करने आया॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन लिपटे सर्प भागते, देख मोर को आया।
त्यों ही चंदन देकर भव का, ताप मिटाने आया॥

मैं पूजन करने आया।
सम्मेदशिखर शुभ सिद्धक्षेत्र की, पूजन करने आया।
मैं पूजन करने आया॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चौखे चौखे तन्दुल चुगकर, थाली भरकर लाया।
अक्षय पद की अतुल भक्ति ले, चरण चढ़ाने आया॥
मैं पूजन करने आया।
सम्मेदशिखर शुभ सिद्धक्षेत्र की, पूजन करने आया।
मैं पूजन करने आया॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्योऽक्षय पद प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

हे काम विजेता ! पुष्पों को ले, अर्पण करने आया।
कामवासना कनक कामिनी, इच्छा मारन आया॥
मैं पूजन करने आया।
सम्मेदशिखर शुभ सिद्धक्षेत्र की, पूजन करने आया।
मैं पूजन करने आया॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यः कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवज लेकर नाना विध के, तुमको देने आया।
क्षुधा वेदना अरु भोगों की, भूख मिटाने आया॥
मैं पूजन करने आया।
सम्मेदशिखर शुभ सिद्धक्षेत्र की, पूजन करने आया।
मैं पूजन करने आया॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंधकार ज्यों सूर्य उदय से, भागा मग भी पाया।
दीपक के मिस ज्योती पाने, चरणों पूज रचाया॥
मैं पूजन करने आया।
सम्मेदशिखर शुभ सिद्धक्षेत्र की, पूजन करने आया।
मैं पूजन करने आया॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन-बूरा कपूर मिश्रित, धूप बनाकर लाया।
जलकर होवे भस्म कर्म की, तुम्हें चढ़ाने आया॥
मैं पूजन करने आया।
सम्मेदशिखर शुभ सिद्धक्षेत्र की, पूजन करने आया।
मैं पूजन करने आया॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्योऽष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

लौंग सुपारी एला भेला, मिष्ट पुष्ट फल लाया।
तुमको भेटे क्योंकी मन में, केवल शिवफल भाया॥
मैं पूजन करने आया।
सम्मेदशिखर शुभ सिद्धक्षेत्र की, पूजन करने आया।
मैं पूजन करने आया॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो मोक्षफलं प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप धूप फल अक्षत चंदन, पुष्प चरू फल लाया।
अर्घ बनाकर शाश्वत पद को, पाने अब मैं आया॥
मैं पूजन करने आया।
सम्मेदशिखर शुभ सिद्धक्षेत्र की, पूजन करने आया।
मैं पूजन करने आया॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्योऽनर्घपद प्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ्य।
प्रति कूटों को भक्ति से, देता हूँ मैं अर्घ्य।
मात्र भावना मम रही, हो मुक्ती संसर्ग॥

(1) गौतम गणधर कूट

(छन्द गीता : लय नवदेवता.....)

जब कोस त्रय का मार्ग तय कर, नाथ गौतम पावते।
तब दर्श मिलते चरण बहुत जो, एक शिल पर राजते॥
हैं गणधरों में प्रमुख गौतम, वीर के इस काल में।
हमने सुपाया धर्म इनसे, इसीलिए यह नाम है॥ 1॥

ॐ ह्रीं श्री गौतम गणधर कूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

तह पवन शीतल परस मानो, धर्म का ही परस हो।
मिटती भवोदधि भ्रमण की वह, टेव जब पद दरस हो॥
सुन्दर मनोहर उच्च मन्दिर, शिखर युत इह सोहता।
मैं ऋद्धिधर सब गणधरों को,अर्घ दे अघ खोवता॥2॥

ॐ ह्रीं वृषभसेनादि सर्वगणधरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जो वेदज्ञाता गृहित मिथ्या, दृष्टि जग में ख्यात थे।
उन मानथम लख वीर का दी, ना दरप को थाम है॥
औ फिर बने वे शिष्य गणधर, प्रथम पद को पाय के।
वे पूर्ण ज्ञानी दीप उत्सव,अर्घ दे हम पाद में॥ 3॥

ॐ ह्रीं श्री गौतम गणधरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

(२) ज्ञानधर कूट

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : गीता)

ये कुन्थु आदि क्षुद्र जैसे, जीव के भी रक्षका।
औ पूर्ण हिंसा त्याग के ये, पाप के हैं भक्षका॥
सम्मेदगिरि पे आय के गुरु, धर्म सागर बन सके।
ये अर्घ दे हम भक्ति से नित, आपदा से बच सके॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री कुन्थुनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु ज्ञानधर ये कूट मानो, ज्ञान को ही धारता।
ये पूज्य पहला पूजकों के, पाप को भी वारता॥
मुझे ज्ञान दे दो पाँचवा बस, मात्र ये ही माँगता।
इस कूट को लख मौत का भय, शीघ्र डर के भागता॥2॥

ॐ ह्रीं श्री ज्ञानधरकूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ये छ्यानवे है कोड़ाकोड़ी, और कोड़ी छ्यानवे।
अरू तीस दो है लाख छ्यानव, ही सहस को जान ले॥
ब्यालीस ऊपर सात सौ है, औ असंख्यों सिद्ध है।
रे ! एक कोड़ि प्रोषधों का, फल मिले वृष वृद्ध है॥ 3॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथ जिनेन्द्रादि षड्नवति कोड़ाकोड़ी षड्नवति कोड़ी द्वात्रिंशत् लक्ष षड्नवति सहस्रसप्तशतक द्विचत्वारिंशत् मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❋❋❋

(3) श्री मित्रधर कूट

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : गीता)

नाथ नमि को माथ नमि के, मैं करूँ नित वन्दना।
वन्दना का फल मिले बस, होय अब तो बन्ध ना॥
चिह्न इनका कमल है ये, कमल सम ही मनहरा।
आपके दरशन किये तो, काम मेरा सब सरा॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ मित्रधर यह कूट कहता, मित्रता सब जीव से।
तू कर सदा ही आत्म से भी, बच सके भव पीव से॥
ये कुन्थु अर के बीच में है, दर्श कर कृत कृत्य तू।
बस हो सकेगा शुद्ध आतम, ना बने फिर भृत्य[1] तू॥2॥

ॐ ह्रीं श्री मित्रधरकूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अरब इक कोड़कोड़ी, नव शतक हैं ऋषिवरा।
लख पितालिस सात सहस ब्या,-लीस ने है शिववरा।
औ कोड़ि प्रोषध फल कहा है, कूट वन्दन का सुनो।
चारित्र धर के भवदधि में, जन्म ना लो तुम पुनो॥3॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्रादि नवशतक कोड़ाकोड़ी एक अरब पञ्चचत्वारिंशत् लक्ष सप्तसहस्र द्विचत्वारिंशत् मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❋❋❋

(4) श्री नाटक कूट

ॐ ह्रीं श्री अरनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : गीता)

ये तीर्थकर है ठारवें ठा, रह सहस शुभ शील को।
ये धारते रत आत्म में नित, मेटते भव पीर को॥
आये शिखर सम्मेद पे ये, पूर्ण विधि को मेटने।
मैं भव भ्रमण के नाशने को, अर्घ लाया भेंट में॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री अरनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

तू ना अटक इस लोक में, मानों कहत यह कूट है।
सो नाम सार्थक दिव्य नाटक, अर्चते अघ टूट है॥
ये मित्रधर अरु सम्बलों के, बीच में ही शोभता।
रे ! पूज कर्त्ता के सदा ही, बीज सुख के बोवता॥2॥

ॐ ह्रीं श्री नाटककूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

है कोड़ि न्यानव लाख न्यानव, सहस न्यावन अर्चना।
मम शतक न्यानव और न्यानव, के पदों में अर्पणा॥
है कोटि छत्रानव प्रोषधों का, फल कहा है सर्वदा।
जो करत नित आ पूज इसकी, होत जीवन अर्थदा॥3॥

ॐ ह्रीं श्री अरनाथ जिनेन्द्रादि नवनवति कोड़ी नवनवति लक्ष नवनवति सहस्र नवनवति शतक नवनवति मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

(5) सम्बल कूट

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : गीता)

ये मल्ल है जो मोह उसके, मारने में शूर थे।
मम मल्लि स्वामी अष्ट विधि के, कर्म को भी चूरते॥
है कलश मंगल चिह्न इनका, ब्रह्मचारी-बाल हैं।
शुभ अर्घ देते भक्ति से हे, नाथ! हम तो बाल हैं॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ये नाम सम्बल कूट जिसका वो जगत में ख्यात हैं।
इस कूट के द्वय चरण में, नमता निरन्तर माथ ये॥
मैं पावने शुभ श्रेष्ठ बल को, आपके पद आऊँगा।
अरु श्रेष्ठ बल को पाय के मैं, मोक्ष पद को पाऊँग॥2॥

ॐ ह्रीं श्री सम्बलकूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कोटि छत्रानव ज्येष्ठ मुनि का, आय चेतन चेतना।
फिर बनाकर मोक्ष पद जो, शाश्वता है केतना[1]॥
सुन असंख्यों बलवतों का, आत्म को नित ध्यावना।
है कोटि छत्रानव प्रोषधों का, फल कहा जिन पाप न॥3॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्रादि षण्णवति कोटि मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

1. घर

(6) संकुल कूट

ॐ ह्रीं श्री श्रेयोनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : गीता- लय नवदेवताओं की सदा.....)

मैं श्रेय की नि:श्रेयस की अति, श्रेय की अर्चा करूँ।
जिनदेव की सुरसेव की, भव खेव की चर्चा करूँ॥
ये नाथ सन्मति श्रेष्ठ मति को, देत है नौ खेत है।
हे पूज्य ! तुमको अर्घ देना, मोक्ष का ही हेत है॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री श्रेयोनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ये कूट संकुल श्रेय का है, श्रेय का ही शासका।
ये मल्लि प्रभु के निकट सुन लो, भव्य के अघ नाशका॥
जो लोक में गुण संकुला है, पूज करके राजते।
उसके कहो फिर कर्म बंधन, क्यों नहीं है भागते॥2॥

ॐ ह्रीं श्री संकुलकूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

छ्यानवे है कोड़कोड़ी, कोड़ी छ्यानव लाख भी।
छ्यानवे है नव सहस अरु, पञ्च शत ये साथ भी॥
और सुन ब्यालीस ऊपर,ऽसंख्य मुनि सत्यार्थ है।
रे फल रहा है, कोटि प्रोषध, अर्घ दे मोक्षार्थ ये॥ 3॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयोनाथ जिनेन्द्रादि षण्णवति कोड़ाकोड़ी षण्णवति कोड़ी षण्णवति लक्ष नवसहस्र पञ्चशतक द्विचत्वारिंशत् मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

(7) सुप्रभ कूट

ॐ ह्रीं श्री सुविधिनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : ज्ञानोदय)

पुष्पदन्त पर से पर रहते, पुण्य पाप से दूर रहे।
सुविधि श्रेष्ठ शम समता रस अरु, परम शान्ति के पूर कहे॥
नाच नाच कर नम नम नमता, नवमें तुम ही नाथ परम।
अर्घ अल्प है आप अधिक है, फिर भी लाया साथ दरब॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री सुविधिनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

हाँप गया हूँ चढ़ते चढ़ते, ऊँचे सुप्रभ कूट विमल।
श्रेष्ठ प्रभा यह ऐसी लगती, मानो आई छूट सबल॥
श्वेत चरण ये कहते सुन लो, वर्ण रहा प्रभु श्वेत गति।
श्वेत भाव ये अर्घ चढ़ा तुम, भाव बनाओ श्वेत मति॥2॥

ॐ ह्रीं श्री सुप्रभकूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कोड़ाकोड़ी एक निन्यानव, लाख सहस है सात मुदा।
सात शतक अरु अस्सी मुनिवर, मोक्ष गये हैं साथ सदा॥
एक कोटि है प्रोषध का फल, वन्दन का सुन श्रेय सहा।
और असंख्यों मुनि को देता, अर्घ बनाकर प्रेय यहाँ॥3॥

ॐ ह्रीं श्री सुविधिनाथ जिनेन्द्रादि एक कोड़ाकोड़ी नवनवति लक्ष सप्त सहस्र सप्त शतक अशीति मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

(8) मोहन कूट

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : ज्ञानोदय)

पद्मप्रभ जी पद्म समा ही, रक्त वर्ण के तीर्थंकर।
हित करते हैं तीन लोक का, अतः कहाते क्षेमंकर॥
अर्घ चढ़ाने से चरणों में, क्या मिलता है कौन कहे ?।
भुक्ति मुक्ति सब मिलती उसको, इसीलिए तव चरण गहे॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह नहीं था शेष तथापि, चार अघाती घातन को।
कूट सु मोहन आये जिन जी, मेटन भव के मातम को॥
तभी हुआ यह नाम सु सार्थक, भवि के मन को भाया था।
पूजन से जो आनन्द मिलता, कौन कहाँ कह पाया था॥ 2॥

ॐ ह्रीं श्री मोहन कूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कोड़ि निन्यानव लाख सतासी, सहस तयालिस ज्ञानीश्वर।
सात शतक अरु सत्तावन है, असंख्यात ही मुक्तीश्वर॥
सुविधिनाथ अरु मुनिसुव्रत के, बीच रहा यह कूट महा।
श्याम वर्ण के चरण पूज का, शुभ फल कोटी वास कहा॥3॥

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभ जिनेन्द्रादि नवनवति कोड़ी सप्ताशीति लक्ष त्रिचत्वारिंशत् सहस्त्र सप्त शतक सप्तनवति मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

(9) निर्जर कूट

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : ज्ञानोदय)

मुनिवर के सब श्रेष्ठ व्रतों को, पालन कर ये सुव्रत जी।
देवों के भी देव बनन को, किया अक्ष को संवृत जी॥
सुव्रत जी को जो नित पूजे, होता बीसो बीस अरे।
अर्घ चढ़ा दे जो भावों से, झट से उसकी रीस टरे॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डितश्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दर निर्जर कूट सदा ही, धरती पर जयवन्त रहे।
इसके दर्शक पूजक वन्दक, पापों से भयवन्त कहे॥
चन्द्रप्रभ के दर्शन करने, जाने का यह मारग है।
सुरनर किन्नर पूजन करके, बनते भव के हारक हैं॥2॥

ॐ ह्रीं श्री निर्जर कूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कोड़ाकोड़ी निन्यानव है, कोड़ि निन्यानव मुनिवर हैं।
लाख निन्यानव शतक नोय है, और निन्यानव अघहर हैं॥
एक कोटि है प्रोषध का फल, गाया जिन ने आगम में।
और असंख्यों अर्घ चढ़ाकर, पा जाऊँ निज आतम मैं॥3॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्रादि नवनवति कोड़ाकोड़ि नवनवति कोड़ि नवनवति लक्ष नवशतक नवनवति मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

(10) ललित कूट

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : ज्ञानोदय)

चन्द्रप्रभ जी चन्द्र चिह्न अरु, चन्द्र समा ही चन्दन है।
चतुर चतुर नर छम छम छम छम,नृत्य करे नित वन्दन है॥
चम-चम करता चाँदी का ये, थाल चाव से भरता हूँ॥
चारु चन्द्र की चर्चा करके,चतुर्गति नहीं भ्रमता हूँ॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ललित छटा युत ललित कूट की, सबसे कठिन चढ़ाई है।
मन होता है ना जाएँ पर,इसकी सुनी बढ़ाई है॥
काले नीले सफेद बादल,घुमड़-घुमड़ कर यूँ कहते।
धीरे जल्दी थकते रुकते,वन्दन कर लो अघ भगते॥2॥

ॐ ह्रीं श्री ललितकूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

नव सौ है चौरासी अरबा,द्वादश कोड़ी लाख असी।
चौरासी है सहस पाँच सौ,पञ्चानव है परम ऋषी॥
और असंख्यों कूट बसा जो, एक तरफ से मोक्ष गये।
छ्यानव लाखों उपवासों का,फल है विधि को शोख गये॥3॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्रादि नव खरब चतुरशीति अरब द्वादश कोड़ि अशीति लक्ष चतुरशीति सहस्र पञ्चशतक पञ्चनवति मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

(11) कैलासगिरि

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : ज्ञानोदय)

वृषभ देव का वृषभ चिह्न है,वृष के ये भरतार रहे।
आदिनाथ जी कर्म नाश कर,मोक्ष महल में सार गहे॥
धर्म दया सुख करुणा केअरु, श्रेष्ठ गुणों के सागर हैं।
अर्घ चढ़ाकर भक्त सिन्धु से, भरने आया गागर है॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

केला सम कैलाशनाथ का, इष्ट मिष्ठ ही जीवन है।
बाल वृद्ध को तभी आपका,जीवन ही संजीवन है॥
अष्टापद है जिसके चारों,ओर सीढ़ियाँ आठ रही।
मोक्ष वृषभ का अर्घ चढ़ाऊँ,देवे शिव का ठाठ सही॥2॥

ॐ ह्रीं श्री अष्टापद सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम तीर्थकर इसी कूट से,जायेंगे अरु मोक्ष गये।
हुण्ड काल के कारण ही तो,अष्टापद वृषभेश गये॥
दस सहसों मुनि वृषभ देव के, साथ निजातम लीन हुये।
जिनने शरणा पाया तुमरा,वो भी आतम चीन गये॥3॥

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्रादि दस सहस्त्र मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

(12) विद्युत्वर कूट

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : ज्ञानोदय)

शीतल सम औ जग में शीतल,होगा नाहीं कोइ यहाँ।
इसीलिए तो महिमा गाने, में समरथ है कौन कहाँ॥
चन्दन मुक्ता चन्द्र सभी ये, फीके ही पड जाते हैं।
अर्घ चढ़ाते शीतल को जो, शीतल झट बन जाते है॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्युत सम ही चंचल देखो, ध्वजा यहाँ फहराती है।
भव भागों की चंचलता को, बतला पास बुलाती है॥
छुपा हुआ यह कूट छूटता,यात्री फिर से लौटत हैं।
आकर देवे अर्घ यहाँ जो, उसके अघ भी छोंटत हैं॥2॥

ॐ ह्रीं श्री विद्युतवर कूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ठारह कोड़ाकोड़ि बयालिस,कोटि लाख बत्तीस कहे।
सहस बयालिस शतक नोय है,पाँच गये शिव ईश भये॥
विद्युत् सम भव भोग देह को,देख असंख्यों शीश गये।
प्रफुल्लित हो वन्दन का फल,कोटि वास का धीश कहे॥3॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्रादि अष्टादश कोड़ाकोड़ी द्विचत्वारिंशत् कोड़ी द्वात्रिंशत् लक्ष द्विचत्वारिंशत् सहस्त्रनवशतक पञ्च मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

(13) स्वयंप्रभ कूट

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : नरेन्द्र)

नन्तकाल की पर्यायों को, नन्त गुणों अरु द्रव्यों।
नन्तनाथ जी एक समय में, जानत अचरज है क्यों ?॥
तीर्थंकर हैं चौदहवें ये, चौदह गुण के पार।
अर्घ चढ़ा दे तो फिर क्यों ना, होवे भव से पार॥ 1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

आप स्वयंभू होने से ही, स्वयंप्रभा पर आये।
कूट नाम यह सार्थ हुआ तब,निज में निज को ध्याये॥
ऊँचा है यह मानो लगता, बहुत पास में होय।
लेकिन चलते थकते पाते, प्रभु के चरणा दोय॥2॥

ॐ ह्रीं श्री स्वयंप्रभ कूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

छ्यावन कोड़ाकोड़ी सत्तर, कोटि लाख है सत्तर।
सत्तर सहसो सात शतक मुनि, गये जगत के उत्तर॥
एक कोटि है प्रोषध का फल, वन्दन का सुन भाई।
भव्यों शिर को टेको तो तुम, बन जाओ शिव साँई॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्रादि षड्नवति कोड़ाकोड़ी सप्तति कोड़ी सप्तति लक्ष सप्त सहस्त्र सप्त शतक मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

(14) धवल कूट

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : नरेन्द्र)

संभव प्रभु की भक्ति से जो, सब कुछ जग में संभव ।
तीन रतन से शोभित तीजे, तीन लोक का वैभव॥
हम आये हैं अर्चन करने, अड़चन अब न शेष।
जब तक शिवसुख पाएँ ना हम, मिले दिगम्बर भेष॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

धवल भाव से धवलिम बनने, धवल कूट पर आए।
संभव सं सुख सुरभित सुन्दर, सार स्वरूपों भाये॥
भक्तिभाव से भव हरने को, भविजन पूजन आये।
अर्पण करते अर्घ अभी हम, अविचल पद को चाहे॥2॥

ॐ ह्रीं श्री धवलकूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कोड़ाकोड़ी नव है बारह, लाख मुनीश्वर शीश।
सहस बयालिस पाँच शतक है, सिद्ध भये जग ईश॥
घननं घननं घंटा देकर, tननं tननं ताल।
वन्दन का फल ब्यालिस लाखा, कहते जिनवर पाल॥3॥

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ जिनेन्द्रादि नव कोड़ाकोड़ि द्वादश लक्ष द्विचत्वारिंशत् सहस्र पञ्चशतक मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

(15) चम्पापुर मन्दारगिरि

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : नरेन्द्र)

वसुसुत है ये वासुपूज्य जी, वासव से भी पूज्य।
चम्पापुर में चेतन ध्याया, तुमसे ना हो दूज्य॥
तरण तुमी हो तरणी भी हो, तैर गये भव तीर।
पावन पूत पवित्र प्रभू जी, पार करो हर पीर॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

परम कल्याणक पाँचों पाये, पञ्चम पद के काज।
पाँच पाद युग बने तभी तो, श्रेष्ठ गिरी पर आज॥
जलमंदिर के पहले प्रभु का, कूट यहाँ है शोभित।
हरी भरी में भैंसे चर इह, वन्दन करती मोहित॥ 2॥

ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदिर गिरी है चम्पापुर में, वासुपूज्य जिनदेवा।
शिव ललना को वरने वाले, मेरे प्रभु भव खेवा॥
एक सहस मुनि मोक्ष हेतु ही,आये निर्जन देखा।
ऊँचा पर्वत मानो शिव का, देता है संदेशा॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्रादि एक सहस्र मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

(16) आनन्द कूट

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : नरेन्द्र)

चौथे युग में चौथे जिन ने, दीना शिव का मारग।
मूल मरने मग दर्शक को, अर्घ चढ़ाऊँ आकर॥
अभिनन्दन जी अभिनन्दन कर, नन्त गुणों में राज।
नन्दन पाने ज्ञानेश्वर जी,नमता शिव के काज॥ 1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

आनन्द पाने आनन्द कूटों, पर मैं आऊँ वन्दन।
वन्दन के बिन कहो जगत में, कैसे कटते बन्धन॥
छोटे-मोटे बन्दर मानो, कूद-कूद कर बोले।
अर्घ चढ़ाकर पूज्य कूट को, अब तो कृतकृत हो ले॥2॥

ॐ ह्रीं श्री आनन्दकूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कोड़ाकोड़ी बत्तर सत्तर, कोड़ी सत्तर लाखा।
सहस बयालिस सात शतक मुनि, और असंख्ये भाखा॥
वासुपूज्य का वन्दन करके, फिर पाते आनन्दा।
कूट लाख है प्रोषध का फल, वन्दन से हो नन्दा॥3॥

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्रादि द्वासप्तति कोड़ाकोड़ी सप्तति लक्ष द्विचत्वारिंशत् सहस्र सप्तशतक मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

(17) सुदत्तवर कूट

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : नरेन्द्र)

वज्रदण्ड है चिह्न वज्र सम, देह यष्टि है पुष्ट।
वृष भर्त्ता ये वृष कर्त्ता है, नमते भगते दुष्ट॥
भिन्न-भिन्न है द्रव्य भिन्न ही, उनके माने धर्म।
धर्मनाथ ने सर्व जानकर, बतलाया शिवशर्म॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सुदत्तवर ये श्रेष्ठ - श्रेष्ठ को, देने में परवीणा।
अहो नाम है सार्थ तभी तो, धर्मनाथ अघहीना॥
उच्च चढ़ाई जलमन्दिर की, चढ़ते बढ़ती हॉफ।
पास कूट है गौतम के यह, नमते मिटते पाप॥2॥

ॐ ह्रीं श्री सुदत्तवर कूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कोड़ाकोड़ि उनीस कहे है, कोड़ि उनीसा बुद्ध।
लख नव-नव ही सहस सात सौ, पञ्चानव है शुद्ध॥
हुए सिद्ध है वन्दन का फल, एक कोटि उपवासा।
मिलता है अरु शीघ्र मिले फिर, सिद्ध शिला का वासा॥3॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्रादि एकोनविंशति कोड़ाकोड़ी एकोनविंशति कोड़ी नव लक्ष नव सहस्र सप्त शतक पञ्चनवति मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

(18) अविचल कूट

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : नरेन्द्र)

सुमतिनाथ जी सुन्दर मति से, सुन्दर जीवन स्त्रष्टा।
श्रेष्ठ बुद्धि दो हमने ईश्वर, सहे जगत में कष्टा॥
कर्म नहीं है शर्म श्रेष्ठ है, पञ्चम प्रभु में ढेर।
अर्घ चढ़ाकर अब तो भव को, भविजन झट से तेर॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अविचल कूटों पर अविचल ही, पद पाने मुनि आये।
इच्छा बिन भी योग रोधने, जिनवर ध्यान लगाये॥
कण-कण-कण है पूज्य यहाँ का, पूज्य[1] पूजता जो जन।
इसीलिए तो अर्घ बनाकर, लाया चरणों पावन॥2॥

ॐ ह्रीं श्री अविचलकूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कोड़कोड़ि चौरासी कोड़ी, लाख बहत्तर जानो।
सहस इक्यासी सात शतक अरु, इक्यासी भी मानो॥
बत्तिस लाखा नौ करोड़ है, प्रोषध फल इह वन्दन।
करो वन्दना भाव भक्ति फिर, बचे कहाँ भव बन्धन॥3॥

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्रादि एककोड़ाकोड़ी चतुरशीति कोड़ी द्वासप्तति लक्ष एकाशीति सहस्र सप्त शतक एकाशीति मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

1. आदरणीय

(19) शान्तिप्रभ कूट

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : नरेन्द्र)

चक्रवर्ती अरु कामदेव पद, छोड़ धर्म के चक्री।
हुए सुशोभित ऐसे जिनके, आगे लज्जित शक्री॥
शान्तिनाथ यह नाम सार्थ वृष, शान्ति ध्वजा फहराई।
परम शान्ति में लीन आत्म में, पाई है गहराई॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

शान्ति प्रभा यह कुन्द प्रभा है, कूट निराला देख।
महावीर अरु सुमतिनाथ के, बीच निरख निज पेठ॥
उच्च नीच नहिं नही चढ़ाई, ये है दीन दयाला।
मोक्ष गये है इह आकर के, वृद्ध बाल को पाला॥2॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिप्रभकूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कोड़ाकोड़ी नव है नव ही, लाख रहित जो पाप।
नव ही सहसा नव ही शतका, और निन्यानव साफ॥
और असंख्यों जित अक्षों ने, किया निजातम पान।
एक कोटि प्रोषध का फल है, अर्घ चढ़ाऊँ आन॥3॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्रादि नव कोड़ाकोड़ी नव लक्ष नव सहस्र नव शतक नवनवति मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

(20) पावापुर पद्म सरोवर

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : गीता)

वीर का है चिह्न शार्दुल, सिंह सम ही वीर थे।
क्षेत्र पावापुर रहा जह, मोक्ष पाया धीर ने॥
नित्य निरंजन आत्म में तब, लीन हो अक्षय बने।
हम अर्घ दे महावीर को अब, मोक्ष पावे शिव[1] बने॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री महावीर जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पावापुरी के पद्म सर के, मध्य में यों राजते।
मानो नखत के बीच चन्दा, देख तम भी भागते॥
जब हवन में पशु होम करके, पाप करते जीव थे।
तब आप आये मेटने को, सर्व जन की पीव थे॥ 2॥

ॐ ह्रीं श्री पावापुर सिद्धक्षेत्रोभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतिप्रभ के पास प्यारा, वीर जिन का कूट का है।
ये तीर्थकर जो अंत वाले, आय इह से छूटते॥
लेकिन रहा है काल हुण्डा, क्षेत्र पावापुर बना।
साथ छत्तिस साधु भी शिव, पाय भोगे सुख घना॥3॥

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्रादि छत्तीस मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❋❋❋

1. सिद्ध भगवान

(21) प्रभास कूट

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : गीता)

सुपार्श्व के ये पार्श्व देखो, विमल निर्मल श्रेष्ठ है।
इसीलिए तो सार्थ नामा, पास रहते जेष्ठ है॥
वर्ण नीला आपका, मानो रहे हो मेघ दल।
आपके पद पूज से हम, पा सके वह नन्त बल॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभास है सूपार्श्व जिनका, कूट को मम नमन हो।
अर्घ देता आपको अरु, चाहता शिव गमन हो॥
धूल पद की दूर मिट्टी, भी वहाँ की रोग को।
नाशती है सौख्य देती, वो दुखी हो चोर हो॥2॥

ॐ ह्रीं श्री प्रभासकूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

उनचास है सब कोड़कोड़ी, कोटि चुरासी सार है।
लाख बहत्तर सहस सातो, सात शतक भव पार है॥
और बयालीस ज्ञान पाकर, बना विधी को दास है।
बत्तीस कोड़ि वास फल को, कहत जिनवर खास है॥3॥

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्रादि एकोनपञ्चाशत् कोड़ाकोड़ी चतुरशीति कोड़ी द्वासप्तति लक्ष सप्त सहस्र सप्तशतक मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❋❋❋

(22) सुवीर कूट

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : गीता)

हे विमल गुणमय! विमल देही! विमल ही तव ज्ञान है।
आता शरण में आपके जो, पूर्ण भरता भान से॥
हो मात्र तेरा वास उर में, जब तक रहूँ इस लोक में।
मैं अर्घ देकर चाहता बस, वास हो निजलोक में॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ये कूट सुविर है विमलस्वामी, वीरता के पार है।
ये पास में सूपार्श्व के हैं, दर्श जग में सार है॥
विद्युत सहित ये बरसते घन, गरजते यों बोलते।
तुम अर्घ दे दो भाव होगें, श्रेष्ठ ही नित तोल के॥2॥

ॐ ह्रीं श्री सुवीरकूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्तर कहे है कोड़कोड़ी, लाख षष्ठी सहस छे।
ब्यालीस ऊपर सात सौ के, मोक्षपुर में बसत है॥
और असंख्यों ध्यान चारों, भव-भ्रमण के हेतु जो।
छोड़ करके शिव गये हम, अर्घ दे शिव केतु हो॥3॥

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्रादि सप्तति कोड़कोड़ी षष्ठी लक्षषष्ठी सहस्र द्विचत्वारिंशत् सप्तशतक मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

(23) सिद्धवर कूट

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : गीता)

हे जन्म मृत्यु अक्षजेता, नाथऽजित ही शरण है।
हे मोक्ष मग के जेष्ठ नेता!, चरण तारण तरण है॥
तुम छत्र चामर पुष्प वृष्टि, दुन्दुभि से राजते।
अरु एक सहस वसु लक्ष्य तन में, अर्घ दे हम आज ये 1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री अजितनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

इस कूट से जब अजित जिन ने, सिद्धि पाई श्रेष्ठ है।
तब नाम सिद्धवर कूट पूजे, सगर जैसे जेष्ठ है॥
यह सुविर से जब उतरते अरु, फिर चढ़े तब आवता।
हैं नेमि के ये पूर्व में मैं, अर्घ दे गुण गावता॥2॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धवरकूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि अरब इक चौरसि कोड़ी, लाख पितालिस मुनिवरा।
इन परम विरागी मौनधर ने, मोह तज कर शिववरा॥
बत्तीस कोटि वास का फल, वन्दना का जिन कहे।
हम वन्दना कर अर्घ देकर, मोक्ष लक्ष्मी बस चहे॥3॥

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्रादि एक अरब चतुरशीति कोड़ी पञ्चचत्वारिंशत् लक्ष मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

(24) गिरनार गिरी

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : गीता)

ये आत्मरस के रसिक नेमी, धर्म के भी नेम है।
इन चरण युग के पूजकों के, नित्य होते क्षेम है॥
ये ब्रह्मचारी बाल है, बालक समा ही निर्मला।
मैं अर्घ देकर नाथ अब तो, बन सकूँ बस गतमला॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

राजुल सति सम नार तजकर, नेमि जा गिरनार है।
गिरि ऊर्जयंत शैलेश पे शैलेश शिव भरतार है॥
मम हो गया पावन पवित मन, अर्घ दे इन पाद में।
भव-भव रहूँ बस आप पद में, मात्र मेरी साद ये॥2॥

ॐ ह्रीं श्री ऊर्जयंत सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ चरण युग है तीन जह पर, कूट अजित के पास है।
अनिरुद्ध शंबू किशन-सुत[1] के, जन बताते खास हैं॥
प्रभु नेमि के सुन संग बत्तर, कोड़ि सत सौ[2] साथ थे।
कालिख मिटाई मोह की इन, अर्घ देते दास ये॥3॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्रादि शंबू प्रद्युम्नकुमारादि द्वासप्तति कोड़ी सप्तशतक मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

1. प्रद्युम्नकुमार 2. सात सौ

(25) सुवर्णभद्र कूट

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः।

(छन्द : गीता)

हम पार्श्व के हैं भक्त निशदिन, पार्श्व को ही पूजते।
आप बिन हे नाथ हमरे, पाप कैसे धूजते॥
यह सत्य है कि दस भवों तक, आप समता धारके।
सर्व विधि को नाश करके, मोक्ष पहुँचे पार है॥1॥

ॐ ह्रीं निर्वाणकल्याणकमण्डित श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ कूट सुवरणभद्र प्यारा, उच्च सबमें श्रेष्ठ है।
प्रभु पार्श्व का भी मोक्ष पाना, रे जगत में जेष्ठ है॥
यह वन्दना की पूर्णता का, देख उत्तम चिह्न है।
मम शुद्ध पावन भाव में भी, हेतु उत्तम भिन्न है॥2॥

ॐ ह्रीं श्री सुवर्णभद्र कूटेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

ये कोड़ि ब्यासी लाख है, चौरासि मुनिवर जानिये।
सहस पैतालिस सात शतक अरु, बय्यालिस भी मानिये॥
सुन कोटि षोडस वास का फल, वन्दना का जान ले।
अर्घ दे दे आत्म अब तो, मोक्ष की भी ठान ले॥3॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्रादि द्वयशीति कोड़ी चतुरशीति लक्ष पञ्चचत्वारिंशत् सप्तशतक द्विचत्वारिंशत् मुनीश्वरेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

❖❖❖

सम्मेदशिखर की तलहटी में स्थित जिनालयों को अर्घ

(छन्द : ज्ञानोदय)

कल्याण निकेतन पार्श्वनाथ का, दूजा मंदिर मदहर है।
रहे जिनालय जहाँ बहत्तर, शिखर मध्य अति मनहर है॥
वृषभ अणिन्दा पार्श्वनाथ अरु, संग्रह आलय के अन्दर।
पार्श्व चन्द्र के सन्मति आश्रम, में राजित है दो मन्दर॥1॥

ॐ ह्रीं कल्याणनिकेतनादि जिनालयस्थित सर्वजिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

आश्रम व्रति के दो रहे, पार्श्व शान्ति के जान।
त्रीयोगी में पार्श्व को, अर्घ दऊँ पद आन॥2॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वशान्तिनाथ जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(छन्द : ज्ञानोदय)

तेरहपन्थी कोठी में श्री, चन्द्र प्रभ का मनमोहक।
देवालय है श्वेत बिम्ब है, दिखलाता है शिव का मग॥
सुविधि पार्श्व के अजित शान्ति के, नन्दीश्वर के हैं प्यारे।
सहस कूट अरु चौबीसी का, नेमिनाथ के दो न्यारे॥
चन्द्र पार्श्व दो गन्धकुटी में, शान्तिनाथ का इक मन्दिर।
चार जिनालय कटक विराजे, पूजन करते हम अन्दर॥
मानस्तम्भ हैं ठीक बीच में, चन्द्र प्रभ का है ऊँचा।
अर्घ चढ़ावे हम सब मिलकर, जीवन होवे बस सच्चा॥3॥

ॐ ह्रीं तेरहपंथी कोठी स्थित सर्व जिनालयेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

आदि शान्ति अरु पार्श्वनाथ है, पार्श्व शान्ति है पार्श्व जिनेश।
पुष्पदन्त का वृषभनाथ का, आदि जिनेश्वर है वृषभेश॥
मानस्तम्भ है पार्श्वनाथ है, पार्श्वनाथ है बाहुबली।
बीसपन्थी में ये सब मन्दिर, अर्घ चढ़ाऊँ सौख्यगली॥4॥

ॐ ह्रीं बीसपंथी कोठी स्थित सर्व जिनालयेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

बीसपन्थी के ठीक सामने, मध्यलोक की रचना है।
पार्श्वनाथ है बहुत बड़े तह, पूजन कर भव बचना है॥
उसके आगे बाहुबली का, चौबीसी भी सुन सोहे।
समवशरण के मंदिर ऊपर, भूत चौबीसी मन मोहे॥
तीस चौबीसी का जो मंदिर, उसकी महिमा कौन कहे।
अर्घ चढ़ाकर हम तो केवल, भवसागर का पार चहे॥5॥

ॐ ह्रीं मध्यलोकादि जिनालयस्थित सर्वजिनालयेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

पार्श्वनाथ महावीर है, कुण्ड चौपड़ा देख।
बाहुबली भी राजते, अर्घ दऊँ शिर टेक॥6॥

ॐ ह्रीं चौपड़ाकुण्डस्थित श्री पार्श्वनाथादि सर्व जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य - ॐ ह्रीं सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः (108 बार)

जयमाला

(दोहा)

सम्मेदाचल क्षेत्र की, जो है सबसे उच्च।
जयमाला गाऊँ अबे, पाने को सुख सच्च॥1॥

(छन्द : पद्धरी)

जय क्षेत्र रहा यह न्यारा है, जय लगता सबको प्यारा है।
जय शेर व्याल अरु व्याघ्र सभी, जय मिल जाते हैं कभी-कभी॥2॥
जय फिर भी भविजन ना डरते, जय प्रभु का सुमरण कर बढ़ते।
जय झाड़ियाँ घने घने, जय शोभा कहते नहीं बने॥3॥
जय खड़ी चढ़ाई रही कहीं, जय रहा ढलाना वहीं कहीं।
जय बढ़ती हाँफी जन चढ़ते, जय घुटने भरते जब उतरे॥4॥
जय फिर भी श्रावक बढ़ते हैं, जय उच्च चढ़ाई चढ़ते हैं।

जय मदमाते गज यहाँ रहे, जय नाम तभी सम्मेद कहे ॥5॥
जय नाला गन्धर्व सीता है, जय इन सब ने मन जीता है।
जय कुण्ड चौपड़ा तह प्रसिद्ध, जय पार्श्वनाथ है यहाँ सिद्ध ॥6॥
जय गौतम स्वामी प्रथम कूट, जय ज्ञान मित्रधर तहा कूट।
जय फिर तो नाटक कूट रहा, जय संबल संकुल कूट रहा ॥7॥
जय सुप्रभ उसके आगे है, जय मोहन में मन पागे है।
जय निर्जर है फिर ललित कूट, जय वृषभ दरश से पाप छूट ॥8॥
जय विद्युत्वर अरु स्वयं प्रभा, जय धवल कूट की धवल प्रभा।
जय वासुपूज्य अरु आनन्द है, जय कूट सुदत्ता नन्दन दे ॥9॥
जय अविचल है फिर कुन्दप्रभा, जय महावीर की शान्त सभा।
जय कूट प्रभासा सुविर कूट,जय दरश करो-अघ जाय छूट ॥10॥
जय कूट सिद्धवर अजितनाथ, जय नेमिनाथ के चरण माथ।
जय सुवर्णभद्र अरु एक गुफा,जय दर्शन हो फिर एक दफा ॥11॥
जय एक बार भी नमन करे, उनचास भवों में मोक्ष वरे।
जो नरक ढोर में जाने का, यह किया बन्ध भव पाने का ॥12॥
यदि बाँध चुका है तो सुनले, वह दरश करे नहीं पर्वत के।
ये रावण श्रेणिक और कई, इह आकर हारे सुनो सभी ॥13॥
इन करी प्रदक्षिण नीचे से, औ आये फिर फिर खीचे से।
जय अब भी जाते बहुत लोग, जय उठकर तजकर शीघ्र भोग ॥14॥
तह कोई मधुवन रुकता है, तो कोई को नहि दिखता है।
तो कोई आ बीमार पड़े, तो कोई पर्वत नहीं चढ़े ॥15॥
वह चाहे जाऊँगा वन्दन, पर जाय सके ना हो क्रन्दन।
जो पुण्यवान है निकटभवि, वो दरशन पाता शिखर रवि ॥16॥
हे नन्त नन्त सब चौबीसी, इह मोक्ष गयी अरु जायेगी।
सुन और अनन्तों मुनिवर जी, ये शुद्धातम को भजकर ही ॥17॥

जय पाकर निज के आनन्द को, जय शीघ्र बने शिव नन्दन वो।
ज्यों देख शेर को भगते गज, त्यों वन्दन करते मिटते मद ॥18॥
इन गगन चूमते शिखरों पर, है ध्यान लगाया तज के घर।
वे आकिंचन बन इसीलिए, है पाया शिव का वैभव ये ॥19॥
इक निर्धन बुढ़िया वन्दन को, जय गयी ज्वार ले चन्दन हो।
वह छुपकर पर्वत पार गयी, वह माने जीवन सार यही ॥20॥
वह कूट कूट पर नमन करे, जय पुलकित होकर गमन करे।
तब देवों ने उस भक्ति देख, जय अतिशय कीने तहाँ नेक ॥21॥
जय ज्वार बनाई मोती सी, वह लगती सुर की ज्योती सी।
जय भक्त लालमन इसी भाँति,जय चला पूजने शिखर माटि ॥22॥
जब ध्यान लगाने मधुवन में, वह बैठा मानो निज मन में।
सुन तब आया इक नागराज, अरु काटा तज के सभी काज ॥23॥
जय सर्प काट के यह मुझको, जय कहता मानो रुको रुको।
मैं वन्दन को ना जाने दूँ, तब सेठ सोचता मन में यूँ॥ 24॥
मैं नहीं उठूँ मैं नहीं हिलूँ, मैं नहीं चलूँ मैं नहीं खिलूँ।
जय जब तक ना आ सर्प वही, इस विष को चूसे नहीं नही ॥25॥
तब इक दो दिन तो निकल गये, जय फिर तो मन आनन्द गहे।
सुन क्यों की वो ही सर्प वहाँ, जय दिखा आवता अहा-अहा ॥26॥
वो आया आकर विष चूसा, अरु चरण छुये वह नहिं रूसा।
तब सेठ चला उठ वन्दन को, बस पूर्ण मिटाने क्रन्दन को ॥27॥
जय तीन उपासों में कैसे, जय करी वन्दना घर जैसे।
वह चक्कर खा ना गिरा कहीं, वह थका नहीं मन म्लान नहीं॥ 28॥
तिन पर्वत पर ना नीर पिया, ना मन में उसकी पीर जिया।
जय क्योंकी गिरि की महिमा थी, जय उर में प्रभु की गरिमा भी॥ 29॥
जय इस विध नेको आय-आय, जय अतिशय बहुविध पाय-पाय।

जय कीना जीवन धन्य-धन्य, जय हुए लोक में रम्य रम्य॥ 30॥
बस एक बार के वन्दन का, फल कोड़ाकोड़ि उपास कहा।
अरु कुछ ही भव में शिव जावे, वो लौट कभी ना भव आवे॥31॥
सुन बीच काल में मनुज देव, वह होता सब जन करे सेव।
औ भुक्ति मुक्ति सब मिलते हैं, तिस बन्धन भव के टलते हैं॥32॥
तुम सुनकर महिमा नित आओ,यदि स्वर्ग मोक्ष फल अब चाहो।
तुम करो वन्दना भक्ति भाव, अरु धर कर उर में अति उछाह॥33॥
फिर साधर्मी को दान करो, अरु नये चैत्य निर्माण करो।
जय जैसे कीर्ति स्तम्भ बना, चित्तौड़ नगर में पाप हना॥34॥
यह यादगिरी है अर्चन की, सम्मेदशिखर के चर्चन की।
इक श्रेष्ठ ने की भक्ति से, तुम इसीलिए निज शक्ति से॥35॥
जय दान त्याग व्रत वास करो, जय तीर्थ याद कुछ खास करो।
मैं बलि बलि जाऊँ कूट-कूट, बस मिट जावे मम कर्म घूट॥36॥
मैं लाऊँ क्या प्रभु आप चरण, हे तीन लोक के आप तरण।
मम विनती है यह बार-बार, तुम चरण रहे मम उर मझार॥37॥
मैं जय जय जय जय जय उचरूँ, मैं आप चरण में मात्र चरूँ।
जय जब तक ना हो मुक्ति रमण, जय मात्र शरण हो आप चरण॥38॥
जय सूरिकल्प से दीक्षा ले, जय विवेकसिन्धु की शिष्या से।
यह विधान पूर्ण है हुआ यहाँ, जयवन्ते रवि-शशि होय जहाँ॥39॥

(घत्ता)

सम्मेदशिखर है, नहीं फिकर है तुमको पाकर अब हमको।
क्योंकी ना भटके, भव में अटके, ना पावे हम बहु दु:खको॥
मैं भाव लगाकर, अर्घ सजाकर, चरणों भेंट चढ़ाता हूँ।
मैं वन्दन करके, चंदन बनके, शिवपथ कदम बढ़ाता हूँ॥

ॐ ह्रीं सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

आशीर्वाद

(छन्द : ज्ञानोदय)

सम्मेदशिखर निर्वाण क्षेत्र की, पूजन जो नित करते हैं।
श्रेष्ठ देव हो श्रेष्ठ मनुज हो, शिव ललना को वरते हैं॥

इत्याशीर्वाद पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

पूर्ण होने का काल-माह आदि

नभ गुप्ती रस गन्ध है, महाराष्ट्र है प्रान्त।
कुन्थलगिरि के निकट में, करमाला निरभ्रान्त॥
गुरु पूनम शुकवार जो, षाढ मास का जान।
थापन वर्षायोग में, पूर्ण हुआ यह मान॥

गुरु परम्परा एवं अंतिम भावना

शांतिसिंधु के वीरसिंधु शुभ, वीरसिंधु के शिवसिंधु।
शिवसिंधु के प्रथम शिष्य थे, ज्ञानसिंधु जो जगइन्दु॥
उनके सर्वोत्तम जगनामी, विद्यासागर सूरी हैं।
और दूसरे परम तपस्वी, विवेक सिंधु अघ चूरि हैं॥
'विजय विनय' ये दो मुनिवर अरु,'विपुल विशाला' श्रमणी यूँ।
और पाँचवी अल्पबुद्धि मैं, विवेक सूरि की श्रमणी हूँ॥
इस ही अल्पबुद्धि के द्वारा सम्मेदाचल यह महिमा।
गायी गइ है प्राज्ञ शोध ले, जिससे बनी रहे गरिमा॥
जब तक सूरज चाँद रहे यह, धरती पर जयवन्त रहे।
भक्ती पूजन वन्दन करके, हम भी अब भगवन्त बने॥

सम्मेदशिखर वंदना

सम्मेदशिखर वन्दूँ सदा, भाव सहित नत भाल।
कहूँ वन्दना क्षेत्र की, पाने शिव की चाल॥

चौपाई

(1)

प्रथम कूट है गौतम स्वामी, वन्दो गणधर पद जगनामी।
चौबीसों के परम गणीशा, चौदह सौ बावन श्री ईशा॥

(2)

कूट ज्ञानधर कुन्थु जिनंदा, वन्दूँ मन-वच मेटो फंदा।
बहुत निकट हैं पूर्ण दयालू, हो जाऊँ में परम कृपालू॥

(3)

नमि जिनवर जी जग के चंदा, कूट मित्रधर सुख आनंदा।
तीनलोक के सभी जीव जी, बने मित्र मम मिटे पीव जी॥

(4)

नाटक तजकर अर जिनस्वामी, नाटक वन्दूँ शिवपथ गामी।
चक्रवर्ती का चक्कर छोड़ा, हमने तुमसे नाता जोड़ा॥

(5)

मल्लिप्रभु का कूट सुसंबल, बसो हृदय में मेरे पल-पल।
बाल ब्रह्ममय विरत विरागी, बना रहूँ मैं तुम पद रागी॥

(6)

सुरनर किन्नर संकुल पूजें, वन्दत श्रेयनाथ अघ धूजे।
समवशरण में ऐसे सोहे, नखतों में ज्यों चंदा मोहे॥

(7)

सुप्रभ से श्री सुविधिनाथ जी, वन्दूँ देना नित्य साथ जी।
धवल वर्ण के चरण तुम्हारे, धवल भाव हो नाथ हमारे॥

(8)

पद्मप्रभ का मोहन कूटा, माना जग में शिव का खूँटा।
मोहनाश कर शिव मही पाई, वन्दूँ तुमको नित शिर-नाई॥

(9)

मुनिसुव्रत का कूट सुनिर्झर, वन्दत होते अघ भी झर-झर।
मुनियों में तुम श्रेष्ठ मुनि हो, चरणा नमते श्रेष्ठ गुणि औ॥

(10)

चन्द्रप्रभ का ललित सुहाना, वन्दूँ देना शिव का दाना।
इसी कूट से असंख्यात भी, साधू गये शिव कर्म घात ही॥

(11)

कैलाशगिरि से आदि जिनेश्वर, वन्दूँ निशदिन हे परमेश्वर।
सहस मुनीश्वर बाहुबली भी, मोक्ष गये इह आत्म बली जी॥

(12)

शीतल जिनवर विद्युतवर से, पूजक को ये इच्छित वर दे।
पाप-ताप को शीतल करके, भक्ति से हम उर में धर लें॥

(13)

स्वयंप्रभा के नाथ अनंता, वन्दूँ मेटो दुख के कंता।
नमः सिद्ध कह दीक्षा लीनी, भव्यों को शिव शिक्षा दीनी॥

(14)

संभव सम सुख पाने हेतू, वन्दूँ धवल कूट वृष केतू।
तीनों रत्नों को पा तीजे, पहुँचे शिव में सब अघ छीजे॥

(15)

चम्पापुर से वासुपूज्य है, मन-वच-तन से करुँ पूज मैं।
पंचकल्याणक गिरि मंदारा, पाये पाँच युगल इह सारा॥

(16)

अभिनंदन जी आनंद दाता, आनंद कूटा बहु विख्याता।
सर्व गुणों का नंदन करने, आये हम सब वंदन करने॥

(17)

सुदत्तकूट है नाथ धर्म का, कारण है यह मोक्ष शर्म[1] का।
धर्म पुण्य को करलो भाई, वंदत ही सब अघ नश जाई॥

(18)

सुमतिनाथ जी अविचल कूटा, गये मोक्ष ये जग से छूटा।
श्रेष्ठमती दो हमको जेष्ठा, सुर-नर वन्दित वन्दूँ श्रेष्ठा॥

(19)

शांतिप्रभ हैं शांति जिनेशा, वन्दूँ तुमको हे तीर्थेशा।
कुन्दप्रभ है दूजा नामा, नमते बनते सार्थक कामा॥

(20)

पावापुर से श्री महावीरा, वर्द्धमान हो सन्मति धीरा।
पद्म सरोवर शिव का थाना, वन्दूँ सुख का द्वारा माना॥

(21)

सुपार्श्वनाथ का कूट प्रभासा, चमके सूरज सम है खासा।
रोग मिटाती इसकी धूली,वन्दूँ, पाने शिव की चूली॥

(22)

सुवीर कूट श्री विमल प्रधाना, वन्दूँ मन में धरि-धरि ध्याना।
चरण-शरण के विन ही नाथा, भटका कर दो आज सनाथा॥

1. शर्म=सुख

(23)

चढ़ते-चढ़ते घाटी उच्च, हाँफ गया हूँ प्रभुवर सच्च।
सिद्धिवरा है कूट अजीत, वन्दूँ गाऊँ तुमरे गीत॥

(24)

ऊर्जयन्त है श्री गिरनारी, पाई तप बल से शिवनारी।
कारण हुण्डासर्पण काल, वन्दूँ नेमि जिनेश्वर चाल॥

(25)

स्वर्णभद्र है कूट प्रसिद्धा, पार्श्वनाथ का मानों सिद्धा।
वंदन होती पूर्ण यहाँ है, चरण गुफा में श्रेष्ठ तहाँ है॥

(26)

एक बार भी करलो वंदन, मिट जावे फिर भव के बंधन।
तीन काल में तीन योग से, वन्दूँ चरणा नित्य धोक दे॥

(27)

विवेकसूरि की शिष्या पञ्चम, भव को तज गति पाने पञ्चम।
बार-बार ये विनती करके, फिर-फिर वन्दें उर में धरके॥

(28)

प्रशस्ति

(छंद-ज्ञानोदय)

अकलंक सूरि ने सौंदा मठ में, जिनशासन की रक्षा की।
बौद्धमती से वाद जीतकर, जैनधर्म की शिक्षा दी॥
यहीं हुई यह सिद्धक्षेत्र की, पूर्ण वंदना प्यारी है।
पढ़ो सुनो हे भव्य जनो, यदि चाहो सुख की क्यारी है॥

(29)

दोहा

[1]माघ शुक्ल की पञ्चमी, सूर्यवार इकतीस।
वीर मोक्ष पच्चीस सौ, पूर्ण हुई थुति ईश॥

1. माघ शुक्ल 5, वीर निर्वाण संवत् 2531, रविवार